International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 14 Issue 01, January 2024,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

अर्थशास्त्र में वर्णित पशु–चिकित्सा : एक अध्ययन

डॉ0 प्रदीप सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास, पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, टी0डी0 पी0जी0 कालेज, जौनपुर

प्रारम्भ में मानव यायावर जीवन जीता था लेकिन जब वह पशुपालन प्रारम्भ किया तब से मानव संस्कृति का विकास प्रारम्भ हुआ। संस्कृति के आरम्भ से मनुष्य पशुओ की उपयोगिता का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करता आ रहा है। पशुपालन में पशुओं का भोजन के रूप में प्रयोग भी प्रायः सदैव रहा है कुछ पशुओं का उपयोग वाहन एवं युद्ध के लिये भी किया जाता था तथा कुछ का उपयोग खेती के काम के लिये भी होता था कुछ का प्रयोग मनोरंजन के लिये भी होता था मनोरंजन के उपयोग में लाने के लिये उन्हें प्रशिक्षण देना होता था इसी प्रकार कुछ पशुओं का उपयोग आयुर्वेद की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था पशुओं के मांस, रक्त, वसा, स्नायु, अस्थि, श्रृंग आदि का उपयोग सदैव रहा है। वैदिक काल से पशुओं की चिकित्सा की सूचना मिलना प्रारम्भ हो जाता है मनुष्य को इसका ज्ञान प्राणी शास्त्र का वैज्ञानिक विकास से ही सम्भावित हुआ है।[1]

गाय–

चाणक्य के अर्थशास्त्र के अनुसार गो, भैंस आदि पालतू पशुओ के देख–रेख में नियुक्त अधिकारी को चाहिये कि वह वेतनीय ग्राहिक, करप्रतिकर, भग्नोत्सृष्टक, भागानुप्रविष्टक, ब्रजपर्यग्र नबत, विनष्ट, क्षीरघृतसज्जात इन आठो के परिप्रेक्ष्य में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लें।[2] गोपालक को चाहिये कि वह सावन, भादो, अश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष और पोष महीनो में गाय भैंसो को दो समय दुहें। माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ में केवल एक समय (सायंकाल) को ही दुहे।[3] इन छह महीनो में गाय–भैंसो को दोनो समय दूहने वाले व्यक्ति का अंगूठा काट देना चाहिये। जो ग्वाला गाय को ठीक समय पर न दूहें उसे उस दिन का वेतन आदि न देना चाहिये।[4] चाणक्य का मन्तव्य है कि गोपाल को चाहिये कि वे बछडो, बूढ़े पशुओं और बीमार पशुओं की उचित परिचर्या को गोपाल को चाहिये कि वह चोरों, हिंसकों, शिकारियों, बहेलियों, शत्रु की बाधाओं आदि से सावधान रहकर ऋतु के अनुसार सुरक्षित जंगलों में गायों को चराये[5] सर्प एवं हिंसक पशुओं को डराने के लिये, चारागाह में गाय की पहिचान के लिये और घबड़ाने वाले पशुओ की गर्दन में लोहे की घंटी बांध देनी चाहिये।[6] इस प्रकार का अन्य का उपयोग कर पालक को गायो की सुरक्षा करने का वर्णन अर्थशास्त्र में मिलता है।

अश्व चिकित्सा–

चाणक्य का कथन है कि अश्वशाला के अध्यक्ष को चाहिये कि वह भेंट स्वरूप प्राप्त, खरीदे हुये युद्ध में मिले हुये, अपने यहां पैदा हुये और बदले में प्राप्त रेहन रखे हुये और कुछ समय के लिये सहायतार्थ प्राप्त इन सभी प्रकार के प्राप्त घोड़ों को उनकी नश्ल, उम्र, रंग, चिन्ह आदि का पूर्ण विवरण अपने रजिस्टर में दर्ज करना चाहिये।[7] बुरी नश्ल वाले, लगड़े–लूले और बीमार घोड़ों को बदल देना चाहिये। अन्यथा उनका उचित

इलाज आदि करवाना चाहिये।[8] घोड़ो को रहने के लिये घड़साला बनवाया जाये, जो घोड़ो की संख्या के अनुसार लम्बी और घोड़ो की लम्बाई से दुगुनी चौड़ी हो उसमें चार दरवाजे, काफी फैलाव, बड़ा बरामदा, दरवाजे के दोनों ओर चबूतरे हो और घूड़साला के दरवाजे पूर्व तथा उत्तर की ओर होने चाहिये। घोड़ों की बांधने के लिये अलग–अलग खूटें होने चाहिये प्रसवा घोड़ियों, घोड़ों और छः माह से तीन वर्ष तक के बछड़ों को बांधने के लिये अलग–अलग स्थान होना चाहिये।[9] अर्थशास्त्र के अनुसार जब घोड़ी ब्याय दे तो उसे तीन दिन एक तरफ प्रस्थ घी पीने के लिये दिया जाना चाहिय। साथ ही दस दिनों तक उसे एक प्रस्थ सत्तू और चिकनाई में मिली दवा पीने के लिये दी जानी चाहिये। तदन्तर उसे अधपके जौ का सॉदा देना चाहिये और ऋतु के अनुसार आहार देना चाहिये।[10] जो घोड़े का बछड़ा पैदा हुआ है उसे दस दिन बाद एक कुडव सत्तू में चौथाई घी मिलाकर देना चाहिये छः माह तक उसे एक प्रस्थ–दूध प्रतिदिन दिया जाना चाहिये। उसके बाद उसे जौ का एक प्रस्थ और उसमें उत्तरोत्तर प्रतिमास आधा प्रस्थ और उसमें उत्तरोत्तर प्रतिमास आधा प्रस्थ बढ़ाकर तीन वर्ष तक यही आहार देना चाहिये। इस प्रकार वह घोड़ा चार या पांच वर्ष में पूरी तरह काम लेने योग्य होता है।[11]घोड़ो के थकान को दूर करने के लिये दवाइयो का मिश्रण (अनुवासन) पिलाना चाहिये। एक कुडव घी या तेल उसके नाक में छोड़ना चाहिये। खाने के लिये उसको दस तुला भूसा, बीस तुला हरी घास या जई आदि देना चाहिये।[12] घोड़ों की परिचर्या और चिकित्सा के लिये जो नियम या विधि–विधान बताये गये है गाय, बैल, गधा, ऊँट, भैंस और भेड़–बकरियों के परिचर्या, चिकित्सा आदि के सम्बन्ध में भी वही दण्ड का प्राविधान है।[13] शरद और ग्रीष्म दोनों ऋतुओं में घोड़ों को दो–दो बार नहलाना चाहिये। गन्ध एवं मालाएं उन्हें प्रतिदिन दी जानी चाहिये। अमावस्या को घोड़ों के स्वरूप एवं निरोग रहने के निमित्त भूतो की बलि देनी चाहिये। तत्पश्चात् पूर्णमासी को उनके कुशलक्षेम आदि के लिये स्वास्तिवाचन पढ़ा जाना चाहिये।[14]अर्थशास्त्र के अनुसार अश्विन मास की नवमी को घोड़ो के स्वस्थ, निरोग आदि रहने के लिये नीराजना–संस्कार करना चाहिये। यात्रा के आगे एवं यात्रा की समाप्ति पर और घोड़ों में कोई संक्रामक राग फैलने पर भी 'नीराजना संस्कार' करना चाहिये।[15] इस प्रकार चाणक्य के समय में पशु–चिकित्सा का पूर्ण विकास हो चुका था। घोड़े के चिकित्सकों को शरीर के हास और वृद्धि का प्रतिकार करने वाले और ऋतुओ के अनुकूल पड़ने वाले आहार का वैज्ञानिक ज्ञान दोनो एक अच्छे पशु चिकित्सक के कार्यों का महत्वपूर्ण विषय रहा है। वर्तमान समय में भी घोड़े को स्वास्थ्य रखने के लिये इन विधियों का सहयोग लिया जाता है।

गज चिकित्सा–

अर्थशास्त्र के अनुसार गजशाला के अध्यक्ष को चाहिये कि वह हाथियों के जंगल की रक्षा करें। सिखाने जाने योग्य हाथी–हाथिनी और उनके बच्चो के लिये वह गजशाला, बांधने, उठने बैठने के यथोचित स्थान बनवायें वही युद्ध सम्बन्धी कार्य, पका हुआ आहार और रही घास भूसा आदि के तोल का निर्णय करें, हाथियों के अम्बारी, अंकुश आदि साजो और युद्ध सम्बन्धी आभूषणों आदि का व्यवस्थित प्रबन्ध करे हाथियों के चिकित्सक और उनकी सेवा–टहल करने वाले कर्मचारियों पर भी अध्यक्ष के द्वारा विशेष नजर रखना चाहिये। रथ–शिक्षक, गज–शिक्षक, चिकित्सक, अश्वशिक्षक और मुर्गा, सुअर आदि के पालने वालो का अध्यक्ष इन सब को दो हजार पण वार्षिक वेतन दिया जाता था।[16]हाथी के लिये उसकी लम्बाई से दुगुनी ऊँची दुगनी चौड़ी और दुगुनी लम्बी

गजशाला बनवानी चाहिये। हाथिनी के रहने की गजशाला उससे दः हाथ अधिक लम्बी होनी चाहिये। गजशाला के आगे बरामदा उसमें बांधने के लिये तराजू आकर के खूंटे (कुमारी) और उसके दरवाजे पूर्व या उत्तर की ओर होने चाहिये।[17] हाथी के स्वास्थ्य आदि को दृष्टि में रखकर गजशाला का निर्माण कराया जाता था। वास्तुशास्त्र ज्योतिष का विकास तदयुगीन समाज में हो चुका था। अतः वास्तु–ज्योतिष–विज्ञान के अनुसार ही गजशाला का निर्माण कराया जाता था। हाथी की लम्बाई जितना चौकोर, चिकना, एक खूंटा वहां गाड़ा जाय। खूंटा एक तख्ते के बीच में लगाकर गाड़ा जाता था। फलतः ऊपर की जमीन ढकी रहे और खूंटे को उखाड़ा न जा सकें। गोबर एवं पेशाब के लिये पीछे की ओर ढलवां स्थान बनवाना चाहिये। हाथी के बैठने, सोने के लिये एक चबूतरा सा बनवाया जाय। इसकी ऊँचाई साढ़े चार हाथ होनी चाहिये युद्ध तथा सवारी उपयोगी हाथियों की शैय्या किले के भीतर ही बनवायी जाय, जा हाथी अभी सिखा या बनैले हो उन्हें किले के बाहर ही रखना चाहिये।[18] चाणक्य के अनुसार एक दिन के बराबर आठ भागों में पहिला तथा सातवां भाग हाथी के स्नान करने के लिये होना चाहिये। स्नान के पश्चात् उन्हें पका आहार देना चाहिये। दोपहर से पहले उन्हें कवायद सिखानी चाहिये। दोपहर के बाद पीने के लिये देना चाहिये। रात के बराबर तीन भागों में से दो भाग सोने के लिये और एक भाग उठने–बैठने के लिये होना चाहिये।[19] गर्मी के मौसम में ही हाथियों को पकड़ना चाहिये बीस वर्ष या उससे अधिक उम्र का हाथी पकड़ने योग्य ह।[20] दूध पीने वाला हाथी, हाथिनी के समान दांतों वाला (मूढ़) जिसके दांत न निकले हो। बीमार हाथी और गर्भिणी तथा दूध चुराने वाली हाथिनी को न पकड़ना चाहिये।[21] सात हाथ ऊँचा नौ हाथ लम्बा और दस हाथ मोटा, चालीस वर्ष उम्र वाली हाथी सर्वोत्तम कोटि का समझा जाता है तीस वर्ष का मध्यम और पच्चीस वर्ष का अधम कोटि का माना जाता है।[22]उत्तम हाथी को जितना आहार दिया जाये, उससे चौथाई हिस्सा कम मध्यम को और उससे भी चौथाई हिस्सा कम मध्यम को और उससे भी चौथाई हिस्सा कम अधम को दिया जाना चाहिये[23] सात हाथ ऊँचे उत्तम हाथी को एक द्रोण चावल, आधा आढक तेल, तीन प्रस्थ–घी, दस पल नमक पचास पल मांस, एक आढक शोखा या दो आढक दही में सना हुआ दाना, दस पल गुण दोपहर के बाद पीने के लिये एक आढक शराब या उससे दुगुना दूध, शरीर के मलने के लिये एक प्रस्थ–तेल, सिर में लगाने के लिये आधार कुडव तेल, इतना ही तेल रात को लगाने के लिये, चालीस तुला तृण, पचास तुला रही घास, आठ तुला सूखी घास औरभूसा तथा पत्तियां जितना खा सके, खिलाना चाहिये।[24]आठ हाथ ऊँचे अत्यराल नामक हाथी को सात हाथी ऊँचे उत्तम कोटि के हाथी के ही बराबर भोजन या आहार दिया जाये। इस प्रकार अवस्था आदि को देखकर हाथियों को वकायदा से सिखायी जाय। अतः जिन हाथियों में उत्तम, मध्यम आदि सांकर्य–लक्षण ज्ञात हो, उनको युद्ध सम्बन्धी कार्यो में लगाना चाहिये। फलतः ऋतुओं के अनुसार ही उन्हें युद्ध आदि कार्यो में लगाना चाहिये। चाणक्य का कथन है कि गज–वैद्य, गजशिक्षक, गजारोही, गज सम्बन्धी शास्त्रोक्त विधियों का ज्ञाता, गजरक्षक, नहलाने–धुलाने वाला, खाना बनाने वाला, चारा देने वाला, बांधने वाला, गजशाला का रक्षक और हाथी के सोने की जगह का प्रबन्ध करने वाला, यह सब हाथी की परिचर्या करने वाले राज कर्मचारी है। रास्ता चलने से बीमारी के कारण अधिक करने से, मद के कारण तथा बुढ़ापे आदि के कारण हाथियो को कोई भी कष्ट हो जाय तो, गजवैद्य अत्यन्त सावधानी से उनकी उचित चिकित्सा आदि करें।[25] चाणक्य के समय में अच्छे गण वैद्य रहे है गज चिकित्सा का पूर्ण विकास एवं उन्नति तत्कालीन समय में हो

चुका था।आचार्य चाणक्य का कथन है कि हाथियों की बल वृद्धि और उनके कुशल क्षेम एवं स्वस्थ, निरोग आदि रहने के लिये चार मास बाद ऋतु सन्धि की तिथि पर वर्ष में तीन बार 'नीराजना' कर्म का विधि–विधान कराया जाय। प्रत्येक अमावस्या पर भूतवलि और प्रत्येक पूर्णमासी पर स्कन्द पूजा आदि भी कराई जाये।[26] चाणक्य का कथन है कि यदि पशुओं में बीमारी या महामारी फैल जाय तो गांव–गांव में रोग–शान्ति आदि के लिये, 'शान्ति–कर्म' करवायें जाये और पशुओ के अधिष्ठाता देवता जैसे हाथी के 'सुब्रहाण्य' अश्व के लिये 'अश्विनी' गौ के लिए 'पशुपति' भैंस के लिये 'वरूण' तथा बकरी के लिये 'अग्नि' आदि देवताओं की विधिवत पूजा आदि करायी जाये। इससे पशु स्वस्थ, निरोग एवं दीर्घजीवी होते थे इस प्रकार मंत्रों के द्वारा भी पशुओं के रोगों का उपचार करवाया जाता था। हाथी का दांत जड़ में जितना मोटा हो उससे दुगुना हिस्सा छोड़कर आगे का बाकी हिस्सा कटा देना चाहिये। जो हाथी नदीचर हो, उनके दांत ढाई वर्ष के बाद और जो हाथी पर्वतो के रैवासी हो उनके दांत पांच वर्ष के बाद और कटवाना चाहिये।[27]इस प्रकार पशुचिकित्सा सम्बन्धी अन्य प्रयोग का भी वर्णन अर्थशास्त्र में किया गया है हाथी के चिकित्सको को शरीर के हास और वृद्धि का प्रतिकार करने वाले और ऋतुओ के अनुसार पड़ने वाले आहार या भोजन आदि का अच्छा ज्ञान होना, योग्य गज–वैद्य का लक्षण है। महाभारत काल में पशु–चिकित्सा का विकास हुआ। सम्राट अशोक ने भी पशुचिकित्सा की विशेष व्यवस्था की थी। गुप्तकाल में भी पशु चिकित्सा की विशेष उन्नति हुई। पाल काप्य ने 'हस्त्यायुर्वेद' की रचना की इस ग्रन्थ में हाथियों के रोगों का परीक्षण एवं चिकित्सा आदि विषयक 160 अध्याय लिखे गये उसमें शल्य–चिकित्सा का भी वर्णन है। अस्तु अर्थशास्त्र की पशु–चिकित्सा का पूर्ण विकास, प्रचार–प्रसार गुप्तकार में देखने को मिलता है।प्राणीशास्त्र का आयुर्वेद–शास्त्र से अधिक सम्बन्ध रहा है। प्राणियों के विविध अंगों की आयुर्वेद की दृष्टि से उपयोगिता का पर्यालोचन किया गया है। इस दिशा में सर्वोच्च प्रगति का परिचय इसी बात से मिल सकता है कि सांप के विष का भी उपचार के लिये उपयोग किया जाता था।[28] सुश्रुत के अनुसार छः प्रकार की मक्खियां छः प्रकार की चीटियां पांच प्रकार के मच्छर, आठ प्रकार के गोजर, 35 प्रकार के बिच्छू और 16 प्रकार के मकड़ें होते है। जोखो का अध्ययन करके बताया गया है कि वे 12 प्रकार के होते थे जिनमें से छः विषैले और 63 उपयोगी थे।[29]

संदर्भ

1. पद्यपुराण, 24/63
2. अर्थ, 2/29/1
3. वही, 2/29/5
4. वही, 2/29/6
5. वही, 2/29/6
6. वही, 2/29/7
7. वही, 2/30/1
8. वही, 2/30/2
9. वही, 2/30/5
10. वही, 2/30/1
11. वही, 2/30/2
12. वही, 2/30/4

13. वही, 2/30/1
14. वही, 2/30/2
15. वही, 2/30/3
16. वही, 5/3/3
17. वही, 2/31/2
18. वही, 2/31/3
19. वही, 2/31/1
20. वही, 2/31/2
21. वही, 2/31/3
22. वही, 2/31/4
23. वही, 2/31/6
24. वही, 2/32/1–2
25. वही, 2/32/3
26. वही, 2/31/1
27. वही, 2/31/2
28. सांपो के वैज्ञानिक विवरण के लिये द्रष्टव्य है, भविष्य पुराण
29. रामजी उपाध्याय, प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका, इलाहाबाद 1966, पृ0 1104